छतरी

मंज़ूर एहतेशाम

देखा जाए तो झगड़ा होना ही था लेकिन वह जिस तरह हुआ था यह अन्दाज़ा किसी को नहीं था। खुद जिन लोगों ने शुरुआत की, उन्हें भी नहीं। दरअसल, शहर कुछ होने का इन्तज़ार करते-करते थक गया था।

गर्मी का लम्बा मौसम गुज़रने के बाद लोगों की मॉनसून की उम्मीद गलत साबित हुई थी और बरसात का डेढ़ माह सूखा बीत चुका था। सारे देश में बरसात, पानी और बाढ़ की खबरें हर माध्यम से शहर पहुँच रही थीं और शहर तप और झुलस रहा था जैसे किसी ने जादू करके बादलों के आने पर पाबन्दी लगा दी हो। लोग बारिश न होने की बात करते-करते इतने थक गए थे कि यह विषय ज़बान पर आना बन्द हो गया था। अपनी व्यस्तता से पल भर छुटकारा पाकर वे भाव-शून्य आँखों से आकाश की ओर देखते और थकान तथा निराशा पर पर्दा डालने, दोहरी मेहनत से, दिनचर्या में जुट जाते। पूजा और नमाज़ ही नहीं, अभी तक शहरवासी वर्षा न होने के विरोध में जलसा, धरना और बन्द – सब कर चुके थे और अब अगर बरसात न हुई तो कहाँ जाएँगे, सोचते बैठे थे।

शहर को दो अलग-अलग हिस्सों में बाँटती वह सड़क थी जिसके एक तरफ सैनेट्री का थोक मार्केट था और दूसरी ओर फर्नीचर, हैंडलूम, कीमती क्रॉकरी के शोरूम। सड़क पर दिन के एक खास समय, दुकानदारों की नज़रें किसी के इन्तज़ार में बेचैन रहने लगी थीं। वह कौन था, लोग उसका नाम तक नहीं जानते थे। रोज़, उस खास समय, दुनिया से बेनियाज़, वह उनके बीच से गुज़रता। कीमती कपड़े, बरसाती जूते पहने, हाथ में फोल्डिंग छतरी लिए वह इस तरह निकला था जैसे बरसात होने ही को हो। लोगों को लगने लगा था कि वे हमेशा से उसे इसी हुलिए में देखते आए हैं। वे यह सोचकर नाराज़ होते जा रहे थे कि यह आदमी बरसात न होने पर उनका और शहर का मज़ाक उड़ाता घूमता है। वह जब भी सड़क से गुज़रता, लोगों की घृणा भरी नज़रें उसका, ओझल होने तक पीछा करतीं।

हर शहर का अपना भूगोल होता है जो उसका मौसम और मिज़ाज तय करता है। इस शहर की विशेषता यहाँ के ताल-तलैया और पहाड़ थे जिनके साथ-साथ ही आबादी का फैलाव था। बीते वर्षों में यहाँ आबादी बढ़ी थी जिसके अनुपात में शहर की दीगर चीज़ों का विकास नहीं हो पाया था। एक ज़माने से पीने के पानी के लिए तालाब थे जो अब भी उसी तरह ज़रूरी थे। शहर के पास कोई बड़ी नदी नहीं बहती थी, सिर्फ छोटी-छोटी बरसाती नदियाँ थीं। तो भी मौसम की पहली बरसात शहर को किसी हिल-स्टेशन-सा ठँसा और खुशगवार कर जाती थी। बरसात में साल-से-साल ऊँच-नीच होती रही हो मगर इतने लम्बे समय तक पानी न गिरना किसी को याद नहीं था।

दिन-ब-दिन वर्षा का न होना शहर के लिए संकट बनता जा रहा था जिसका विज्ञापन वे तालाब थे जिनके तट सिमटकर नीचे चले गए थे और पानी तलछट में छूटा रह गया था। लगता किसी सुबह जब लोग जाएँगे, तालाब सूखे मिलेंगे। वह शहर में सबके लिए अन्तिम दिन होगा। इधर सारे अन्देशों में घिरा जीवन था, उधर देश के जल-थल होने और जगह-जगह सैलाब की खबरें थीं। ट्रांज़िस्टर और टी.वी. पर वर्षा का उत्सव मनाते, मेघ और मल्हार, झड़ी और फुवार के गीत थे जिनमें बिजली-

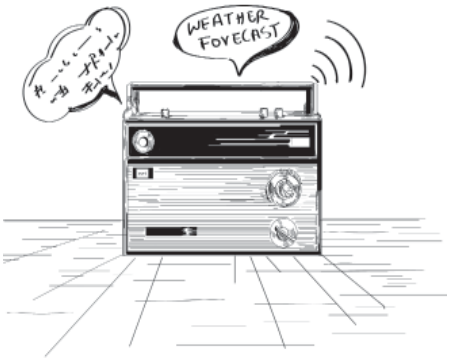

बादल-पानी और दिल की धड़कन का लेखा-जोखा था। शहर में रहने वाले यह मानने पर मजबूर होते जा रहे थे कि वह सब किसी और जनम और जीवन से सम्बन्धित था जिसे उन्हें भूलकर जीना था। एक बेबसी का एहसास होना गुस्से से भरता जा रहा था। सड़क के दुकानदारों की ही तरह।

दरअसल, यह सड़क और इसका बाज़ार कई मायने में शहर का प्रतिनिधित्व करते थे। यहाँ मालदार से लेकर मामूली पूँजीवाले व्यवसायी दुकानें खोले बैठे थे, धर्म और जाति में विभाजित हुए बिना। जब चिलचिलाती धूप में वह कीमती कपड़े, बरसाती जूते पहने अजनबी, हाथ में फोल्डिंग छतरी लिए, नपे-तुले कदम उठाता सड़क से गुज़रता तो सब लोग एक-समान अपमानित अनुभव करते और उसके नज़र से ओझल होते ही, बिना उसका नाम भी लिए, अपने-अपने काम में जुटकर खुद को थकाने और उसको भुलाने के जतन करने लगते।

धीरे-धीरे लोगों को सारी उलझनें, निराशाएँ और गुस्सा टाँगने को 'बरसात-क्यों-नहीं-हो-रही' की खूँटी मिल गई थी। इस खूँटी को हर एक व्यक्ति मनमानी सूरत-शक्ल में ढालने में लग गया था। देश में राजनीति के नाम पर जो अप्रिय हो रहा था, परिवारवालों को जो एक-दूसरे से गिले-शिकवे थे, धन्धे में जो घाटा था, प्रेम में जो असफलता या दोस्ती में जो धोखाधड़ी, सब किसी क्षण बरसात न होने के गुस्से की आँच को भड़का जाते। हर कोई यह मानकर चलने लगा था कि उसका पड़ोसी इस संकट का कारण था। जैसे सड़क के दुकानदारों के लिए फोल्डिंग छतरी लेकर गुज़रनेवाला सारी मुश्किलों की जड़ और वर्षा न होने का कारण तय हो चुका था। एक-दूसरे से कहे बगैर, यह लोगों की आम सहमति बन गई थी। आपस में लड़ने का जोखिम उठाए बिना उन्होंने फोल्डिंग छतरीधारी को अपना दुश्मन और गुस्से का निशाना बनाना तय कर लिया था। दिन की एक खास घड़ी, अब वे उसके आने की प्रतीक्षा करने लगे थे।

राह से गुज़रने वाले व्यक्ति में, अगर वह चिलचिलाती धूप में छतरी लेकर न चलता तो अलग से कोई विशेषता नहीं थी। वह किसी कम्पनी के सेल्समैन से लेकर किसी बैंक में काम करनेवाले कर्मचारी तक, कुछ भी हो सकता था। यह अनुमान इसलिए लगाया जा सकता था कि वह कपड़े-जूते करीने से पहनता था, बाल सँवरे हुए और गले में प्राय: टाई बँधी रहती थी। चलते हुए नाक की सीध में देखता वह किसी गुत्थी को सुलझाता, सोचता नज़र आता था। पूरे बाज़ार में उसकी किसी से अलेक-सलेक नहीं थी। वह रोज़ आता दिखाई देता। उसे सड़क से लौटकर

जाते किसी ने नहीं देखा था। उसके कदम उठाने में एहतियात थी जैसे एक-एक पैर तय करके रख रहा हो। धीरे-धीरे सबको पक्का विश्वास हो गया था कि उनके 'पानी-कब-गिरेगा' सोचते चेहरों को देखता, व्यंग से मुस्कुराता, वह लहक-लहककर कदम उठाता है। उसकी एक-एक अदा उन्हें चिढ़ाने की है।

आसपास के दुश्मनों से बेनियाज़ फोल्डिंग छतरीधारी सड़क पर रोज़ अपना रास्ता तय कर रहा था।

बीती रात टेलीविज़न पर, धूप में जलते, नफरत में सुलगते शहर ने जो फिल्म देखी थी, उसके फोकस में बरसात और पानी में भीगते-गाते-नायक-नायिका, नदी-नाले और हरियाली थी। साथ ही मौसम की भविष्यवाणी, सेटेलाइट द्वारा खींचे गए चित्र सहित, अगले दिन शहर में भारी बरसात की थी। चित्र में घने बादल सबको शहर पर घिरे नज़र आए थे और अनेक बार टूटी आशा फिर जुड़ी थी कि शायद इस बार पानी गिर जाए। बरसात के ख्वाब देखता शहर रातभर गर्मी में बेचैन रहा था। सुबह जब लोग जागे थे तो आसमान गँदला और सूरज तेज़ी-से चमकता पाया था। पिछली रात की फिल्म और मौसम विभाग की भविष्यवाणी सबको एक भौंडा मज़ाक लगी थी। सारे शहर ने अपने दिनों-दिन सूखते तालाबों का स्मरण किया था और साथ मिलकर सोचा था – 'पानी कब गिरेगा?' और फिर सब अपनी-अपनी दिनचर्या में व्यस्त हो गए थे।

सड़क के बाज़ार की दशा उस दिन इसलिए और खराब थी कि बिजली न होने के कारण कूलर और पंखे बन्द थे। अधिकांश दुकानदार उस समय दुकानों के बाहर बरामदे में साँस लेने को निकले हुए थे जब किसी जादू में बँधकर उन्होंने चौराहे की ओर देखा था जहाँ फोल्डिंग

छतरीवाला, नपे-तुले कदम उठाता प्रवेश कर रहा था। साफ-सुथरे कपड़े, टाई, छाता, धीरे-धीरे मुख्य बाज़ार के बीच आगे बढ़ता। लेटर-बॉक्स, पान की दुकान, अखबार और रिसाले-पत्रिकाओं के स्टॉल के सामने से निकलकर उस पल वह एस.टी.डी.-पी.सी.ओ. के निकट था जब कोई उससे टकराया था। टकराने से उसका सन्तुलन गड़बड़ाया था और वह सँभल भी न पाया था कि किसी और ने बढ़कर धक्का दिया था। वह नाली में गिरते-गिरते बचा था। देखते-ही-देखते वह लोगों से घिर गया था जिनके बीच उसका छाता छीनने के लिए छीना-झपटी शुरू हो गई थी। कुछ ही देर में लोग उसे भूल गए थे। उसका छाता हथियाने के लिए उनमें होड़ लगी थी और आपस में मारपीट शुरू हो गई थी। भीड़ और मारपीट बढ़ती जा रही थी। सड़क पर ट्रैफिक रुक गया था। छीना-झपटी में कुछ लोग घायल हो गए थे। उनके हिमायती और उनसे लड़नेवालों के गिरोह बन गए थे। ज़ोर का धमाका, जो किसी टायर बर्स्ट होने का था, सुनकर लोगों में भगदड़ मच गई थी। सड़क के दोनों ओर दुकानों के शटर गिरने लगे थे। मारपीट बढ़ गई थी। पुलिस आ गई थी और हालात को काबू में रखने के लिए हवाई फायरिंग करनी पड़ी थी। आग-सी तेज़ी-से शहर में बलवे की खबर फैल गई थी। आसार कर्फ्यू लगने के थे कि लोगों

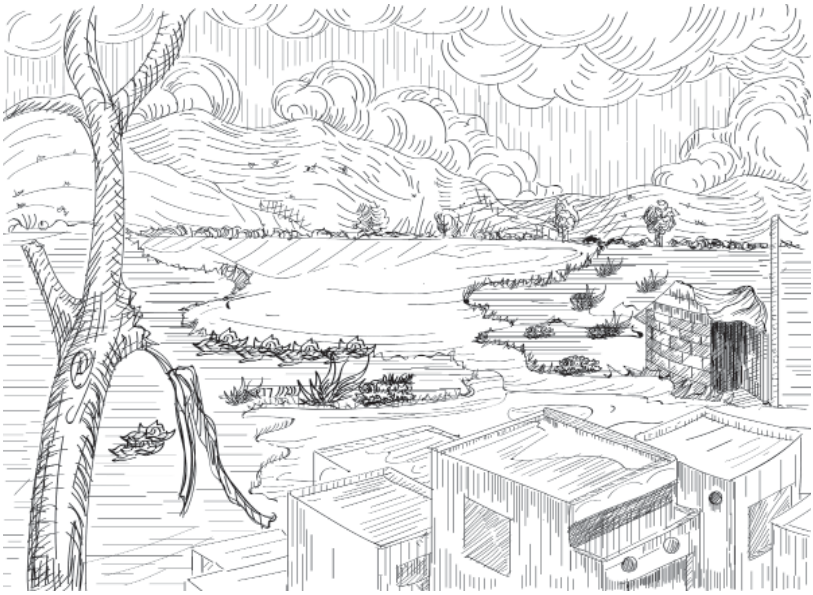

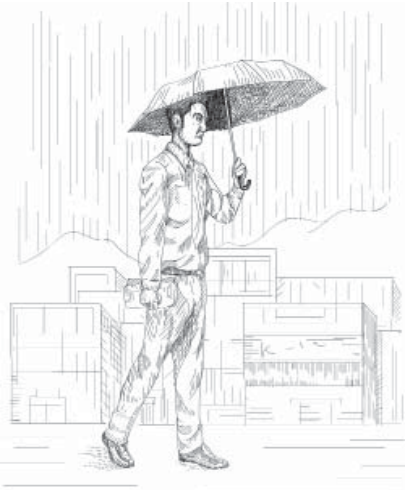

का ध्यान बढ़ते अँधेरे और आकाश में घिर आए बादलों की ओर गया था। इससे पहले कि कर्फ्यू का सोचा जाता, शहर में अटाटूट बारिश शुरू हो चुकी थी जो आनेवाले आठ दिन तक बिना एक पल थमे होती रही थी।

शहर में छतरियाँ और बरसातियाँ चौतरफ नज़र आने लगी थीं। सूखते तालाब पानी से लबालब हो गए थे। निचले इलाके डूब में आ गए थे। लोग अपने मकानों की देख-रेख और बरसात के मज़े लेने में लग गए थे। झगड़े की याद बरसात के पानी में घुल गई थी। आठ दिन की झड़ी के बाद भी बादल शहर पर छाए रहे थे और थम-थमकर दिनों बरसते रहे थे।

अगली बार जब अजनबी छतरी लगाए, फुटपाथ और सड़क पर जमे पानी के बीच एहतियात से कदम रखता उस सड़क से गुज़रा, तो न तो उसे किसी ने गौर से देखा, न ही पहचाना। खुद वह यह कभी नहीं समझ पाया कि उस दिन उसकी छतरी को लेकर शहर दीवाना होते-होते क्यों बचा था।

मंज़ूर एहतेशाम (1948-2021): प्रसिद्ध कहानीकार और उपन्यासकार। पद्मश्री सम्मान समेत अनेक पुरस्कारों से सम्मानित। इंजीनियरिंग की अधूरी शिक्षा के बाद दवाएँ बेचीं और पिछले 25 वर्षों से फर्नीचर का व्यवसाय भी कर रहे थे। निराला सृजनपीठ, भोपाल के अध्यक्ष रहे हैं। अप्रैल, 2021 में कोविड से इनकी मृत्यु हुई।

सभी चित्र: शुभम आचार्य: एक कलाकार के रूप में इनकी रुचि पारिस्थितिकी और पर्यावरण के क्षेत्र में है। परिदृश्य देखना और उन्हें चित्रित करना पसन्द है। सामाजिक और राजनीतिक परिदृश्य जो ऐतिहासिक हस्तक्षेप के कारण बड़े पैमाने पर बदल गए हैं, इनकी कलाकृतियों की एक प्रमुख अवधारणा है।

यह कहानी *तमाशा तथा अन्य कहानियाँ* पुस्तक से साभार।

— — — — —

भूल सुधार

संदर्भ अंक 133 में प्रकाशित लेख *गणेश का सफर और कोविड* में गलतीवश प्रकाशित हो गया है कि उपरोक्त लेख के लेखक रोहित नेमा सरकारी स्कूल में पढ़ाते रहे हैं। इसके सही रूप को इस तरह पढ़ें - रोहित नेमा निम्न आय प्राइवेट स्कूल में पढ़ाते रहे हैं।